अपराध

पत्थर न बन जाएं हंसती-खेलती जिंदगियां

वक्त का तकाजा यही है कि अगर कानून को दो कदम तो हमें भी एक कदम आगे बढ़ने की जरूरत है, ताकि हंसती-खेलती जिंदगियां पत्थर-सी बेजान न बनने पाएं।

हमारे देश में जहां रिश्ते निभाने और उनका आदर करने की बातें बचपन से घोट-घोटकर पिलाई जाती हैं, वहां रिश्तों का यूं कलंकित होना एक ऐसे बदलाव का संकेत है, जहां आकर मानवीय संवेदनाएं और शर्म दफन हो जाते हैं। अगर सही मायनों में देखा जाए तो यह बदलाव कोई नया नहीं है। बस इतना भर है कि लोक-लाज के डर से घर की चारदीवारी में दबे रहने वाले किस्से कुछ हद तक अब सामने आने लगे हैं। बाप, बेटी से मुंह काला कर रहा है। शिक्षक, शिष्या को हवस का शिकार बना रहा है। भाई, बहन का सौदा करता है। पति, पत्नी को गैर मर्द के सामने परोसने से गुरेज नहीं करता।

ये खबरें अब उतना अचंभित नहीं करतीं, जितना कुछ साल पहले तक किया करती थीं। मतलब हम ऐसी खबरों के आदी बनते जा रहे हैं। ऐसा सिर्फ इसलिए क्योंकि हमारे आस-पास, नाते-रिश्तेदारी में इस तरह की घटनाएं बड़ी तेजी से घट रही हैं। अहमदाबाद में अभी एक कलियुगी बाप ने नशे की गिरफ्त में अपनी मासूम बेटी के साथ बलात्कार कर डाला। कुछ वक्त पहले 40 साल के बाप ने अपनी बेटी को ऐसे ही जख्म देकर उसे अस्पताल में जिंदगी और मौत के बीच झूलने के लिए छोड़ दिया था।

कुछ और पीछे चलें तो एक ऐसे बाप की दास्तां भी सामने आई थी, जो अपनी नाबालिग बेटी से यह कहकर बलात्कार करता रहा कि अगर उसने ऐसा नहीं करने दिया तो वह स्कूल की फीस नहीं देगा, उसे भूखा मरने के लिए छोड़ देगा। मुंबई में एक बाप अपनी बेटी को सालों तक हवस का शिकार बनाता रहा और अंत में उसे गर्भवती बना डाला, एक और बाप तांत्रिक के कहने पर न सिर्फ अपनी बेटी की आबरू तार-तार करता रहा, बल्कि बेटे को भी ऐसा करने के लिए उकसाता रहा। इनमें से ज्यादातर कसूरवार अब सलाखों के पीछे हैं और जो नहीं हैं, उनकी तलाश हो रही है। उन्हें पकड़ा जाएगा, अदालत में पेश किया जाएगा, मुकदमा चलाया जाएगा, साबित किया जाएगा कि वे गुनहगार हैं और फिर उन्हें मामूली सजाएं सुनाकर जेल भेज दिया जाएगा, ताकि बाहर आकर वह फिर किसी की जिंदगी उजाड़ सकें।

चंद महीने पहले जब ऑस्ट्रिया के जोसेफ फ्रित्सल और सेंटियागो के मैनुअल बारतियारा द्वारा अपनी बेटियों के साथ सालों तक बलात्कार और उनसे बच्चे पैदा करने के सनसनीखेज मामले सामने आए थे तो शायद किसी ने सोचा भी नहीं होगा कि समाज के लिए कोढ़ बन चुके ये लोग भारत के कलियुगी बापों के लिए प्रेरणास्त्रोत साबित होंगे।

बलात्कार जैसे मामलों की रफ्तार में तेजी के रुख का सबसे बड़ा कारण कानून का भय नहीं होना है। इंसान के अपराध करने के दो ही कारण होते हैं- एक तो जब मजबूरी उसे इस मोड़ पर ले आए और दूसरा जब उसे इस बात का इल्म हो कि दौलत के बल पर या कानून की कमजोरी के बल पर वह आज़ाद घूम सकेगा। भारतीय दंड संहिता की धारा-376 के तहत बलात्कार की सजा उम्रकैद तक है, लेकिन ऐसे कुछ ही मामले होंगे, जिनमें यह सजा सुनाई गई हो।

नेशनल क्राइम रिपोर्ट ब्यूरो के मुताबिक 1971 से 2006 तक हत्या के मामलों में दोगुनी बढ़ोतरी हुई, अपहरण के मामले 149 प्रतिशत बढ़े, जबकि रेप के मामलों में 678 फीसदी का इजाफा हुआ, जो अपने आप में यह दर्शाता है कि हमारे देश में इस तरह के जघन्य अपराध कितनी निर्भयता से किये जाते हैं। बीच में इस तरह की आवाजें कई बार उठ चुकी हैं कि बलात्कार के मामलों में सजा को कठोर बनाया जाए, लेकिन हम अब तक पुराने ढांचे को ही नहीं छोड़ पा रहे हैं। जब कत्ल के लिए हमारे देश में मौत की सजा का प्रावधान है तो फिर बलात्कार जैसे संगीन मामलों में इस तरह के फैसले क्यों नहीं सुनाए जाते।

यह सवाल आज हर किसी के जहन में उठ रहा है, खासकर उन पीड़ितों के, जिन्होंने इस दर्द को झेला। कत्ल का मतलब है किसी की जिंदगी एक बार में खत्म कर देना, लेकिन बलात्कार का मतलब है, ताउम्र के लिए उसे एक ऐसा घाव देना जिसका अहसास उसे मरते दम तक रहे, जिसकी चुभन उसे चैन से रहने न दे और जिसका डर उसे रात भर जगाए रखे। इससे बुरी बात और क्या हो सकती है कि एक पढ़ा-लिखा युवक अपनी शिष्या के साथ बलात्कार कर उसे मौत चूमने के लिए मजबूर करने के पश्चात भी आईएएस की परीक्षा पास कर लेता है और अदालत इससे खुश होकर उसकी सजा कम कर देती है। क्या आईएएस की परीक्षा पास करना सजा कम करने का पैमाना मानी जा सकती है।

यह बात सही है कि अगर बलात्कार के मामलों में मृत्यु-दंड की सजा का प्रावधान होगा तो इसके गलत इस्तेमाल की प्रवृत्ति भी बढ़ेगी, क्योंकि हमारे देश में दूसरों को फंसाने के लिए इस तरह के हथकंडे अपनाने की परंपरा बहुत पुरानी है, लेकिन कम से कम रिश्तों को कलंकित करने जैसे मामलों में तो इस तरह की सजा दी ही जा सकती है। वैसे इस स्तर तक जाने के लिए कानून के साथ-साथ हमें अपनी सोच बदलने की भी जरूरत है।

याद हो वर्षों पुराने एक मामले में जब नाबालिग बच्ची से उसके घर में बलात्कार करने और फिर उसका बड़ी ही बेरहमी से कत्ल करने के दोषी को अदालत ने सजा-ए-मौत सुनाई थी तो तमाम लोगों ने इसका विरोध किया था। मानवाधिकारों की दुहाई देने वाले कुछ संगठनों ने सड़कों पर मोमबत्तियां जलाकर फैसले की मुखालफत की थी। इस मामले में कहीं से भी ऐसी कोई गुंजाइश नहीं थी, जिससे यह प्रतीत होता हो कि किसी बेगुनाह को फंदा पहनाया जा रहा हो। क्या इतना जघन्य अपराध करने वाले के प्रति सहानुभूति जताना, ऐसी घिनौनी सोच रखने वालों को प्रेरित करने जैसा नहीं है।

वक्त का तकाजा यही है कि अगर कानून को दो कदम तो हमें भी एक कदम आगे बढ़ने की जरूरत है, ताकि हंसती-खेलती जिंदगियां पत्थर-सी बेजान न बनने पाएं।

- नीरज नैयर

जासूसी दुनिया के बेताज बादशाह इब्ने सफ़ी

सुप्रसिद्ध लेखिका अगाथा क्रिस्टी ने अपने एक इंटरव्यू में यह कहकर कि एक अनजान एशियाई लेखक ने उनसे ज्यादा जासूसी किताबें लिखी हैं और उनसे ज्यादा जिसकी किताबें बिकी हैं, अपने पाठकों को चौंका दिया था। 77 वर्षीय अगाथा क्रिस्टी ने 1976 में अपने निधन तक 80 उपन्यास लिखे थे, जिनकी लगभग 30 लाख प्रतियाँ बिक चुकी थीं। उनसे ज्यादा लिखने व बिकने वाले लेखक का नाम था - इब्ने सफ़ी, जिन्होंने अपने 52 वर्षों के जीवनकाल में (1980 में निधन) 245 उपन्यास लिखे, जिनकी 50 लाख से ज्यादा प्रतियाँ बिकीं। कर्नल विनोद (उर्दू संस्करण में फरीदी), कैप्टन हमीद, राजेश (उर्दू संस्करण में इमरान), जैसे अमर पात्रों के रचयिता इब्ने सफ़ी के जासूसी उपन्यासों ने सन् 1950-80 में वही काम किया, जो बरसों पहले बाबू देवकीनंदन खत्री ने 'चन्द्रकान्ता', 'चन्द्रकांता संतति' और 'भूतनाथ' लिखकर किया था। एक पूरी पीढ़ी इब्ने सफ़ी के हर माह आने वाले उपन्यासों के पीछे दिन का काम, रात की नींद, स्कूल का होमवर्क छोड़कर दीवानगी के आलम में रहती थी।

जन्मतिथि एवं पुण्यतिथि पर विशेष

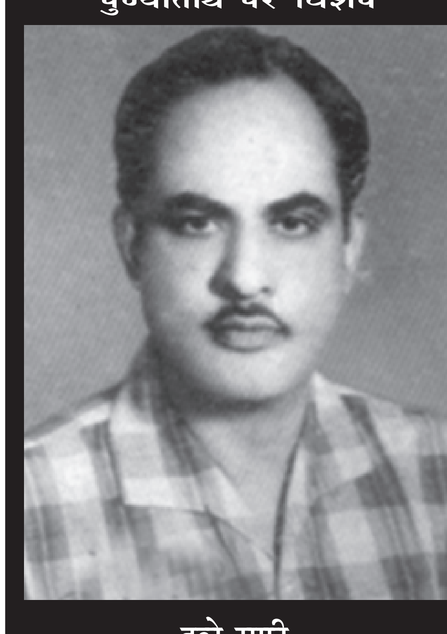

इब्ने सफ़ी
26 जुलाई
1928 - 1980

पुराने शहर, हुसैनीआलम में श्री पद्माराव की 'वन आना लाइब्रेरी' के पास इब्ने सफ़ी की उर्दू और हिन्दी किताबों का खजाना था। अनगिनत पाठक वहाँ से किताबें ले जाते, पढ़ते और तृप्त हो जाते। सन् 1963 में उस लाइब्रेरी के पाठकों में शायद सबसे कम उम्र का पाठक मैं था- दस वर्ष का। हिन्दी मिलाप के श्री अर्जुन प्रसाद की सिफारिश पर मुझे किताबें मिलनी शुरू हुईं।

इब्ने सफ़ी का जन्म 26 जुलाई, 1928 को इलाहाबाद के नारा नामक गाँव में हुआ था। उनका असली नाम था असरार अहमद, जो बाद में इब्ने सफ़ी हुआ। उनकी प्राथमिक शिक्षा नारा नामक गाँव में और माध्यमिक शिक्षा इलाहाबाद में हुई। उन्होंने इलाहाबाद से ही इंटर किया और आगरा यूनिवर्सिटी से बी.ए. पूरा किया। इस दौरान उनकी भेंट अब्बास हुसैनी एवं जमाल रिज़वी और उनके भाइयों से हुई, जो गहरी दोस्ती में बदली और उनके लेखन-यात्रा में नींव का पत्थर बनी। सन् 1948 में अब्बास हुसैनी ने 'नकहत प्रकाशन' प्रारंभ किया, जिसमें इब्ने सफ़ी ने काव्य संपादकीय विभाग का भार संभाला। सन् 1951 में एक साहित्यिक चर्चा के दौरान किसी बुजुर्ग ने टिप्पणी की कि उर्दू में केवल कामुक कहानियाँ बिक सकती हैं, बाकी साहित्य को पूछने वाला कोई नहीं है। इब्ने सफ़ी ने आपत्ति करते कहा कि किसी ने भी कामुक साहित्य की बाढ़ को रोकने का प्रयास नहीं किया। इस धारा को रोकने के लिए नया रोचक साहित्य बाज़ार में आना चाहिए। इब्ने सफ़ी ने बचपन से तिलिस्मि दुनिया के किस्सों की सबसे रोचक किताब 'तिलिस्म होशरुबा' पढ़ी हुई थी और उसका जादुई असर 80 वर्षीय लोगों पर भी वह देख चुके थे। वह ग्रंथ उनके लिये 'जासूसी दुनिया' नाम से शुरू होने वाले उपन्यास श्रृंखला में लिखने का प्रेरणास्त्रोत बना। मार्च-1952 में इब्ने सफ़ी के नाम से लिखा उनका पहला उपन्यास 'दिलेर मुजरिम' इलाहाबाद से छपा, जिसमें इंस्पेक्टर फरीदी (हिन्दी अनुवाद में कर्नल विनोद) एवं सार्जेंट हमीद (हिन्दी अनुवाद में कैप्टन हमीद) जैसे अमर पात्रों की रचना हुई। उस समय इब्ने सफ़ी इलाहाबाद में एक स्कूल में अध्यापक थे। अगस्त-1952 में उन्होंने कराची का रास्ता पकड़ा, जहाँ उनके पिता आजादी के बाद जा चुके थे। वहाँ से उन्होंने उर्दू में और उनके मित्र अब्बास हुसैनी ने इलाहाबाद से उर्दू/हिन्दी में 'जासूसी दुनिया' का प्रकाशन प्रारंभ किया। अगले 3 दशकों तक हिन्दुस्तान एवं पाकिस्तान की सीमाएँ इब्ने सफ़ी और उनके असंख्य पाठकों के बीच आड़े नहीं आ सकी। सन् 1960 तक उन्होंने लगभग 125 उपन्यास लिख डाले थे और वह एशिया के सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले लेखक बन चुके थे।

ज्यादा सोचने और लिखने का उनके दिमाग पर गहरा असर पड़ा और 1960-63 के बीच 'सिज़ोफ्रेनिया' से ग्रस्त हो गये और उन तीन वर्षों में वे एक शब्द भी नहीं लिख सके। नवंबर-1963 में 'डेढ़ मतवाले' नामक उपन्यास से उनकी शानदार वापसी हुई। इस उपन्यास का विमोचन श्री लाल बहादुर शास्त्री के हाथों हुआ। भारी माँग के कारण, इस उपन्यास का दूसरा संस्करण एक सप्ताह के भीतर छापना पड़ा, जो हाथों-हाथ बिका।

70 के दशक में अपने नये प्रशिक्षणार्थियों के लिए पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आईएसआई अनौपचारिक रूप से इब्ने सफ़ी की सेवाएँ लेती रही। 1975 में उनके एक उपन्यास पर 'धमाका' नामक फिल्म भी बनी। दिसंबर-1979 में वे कैंसर का शिकार हुए और 1980 में अपने जन्मदिन 26 जुलाई को ही उनका निधन हुआ। अंतिम समय तक उनका लेखन जारी था। इमरान श्रृंखला का अपूर्ण उपन्यास 'आखिरी आदमी', उनके पलंग के सिरहाने रखा था। उनकी पत्नी सलमा खातून का देहांत 2003 में हुआ। उनके चार पुत्र अभी अमेरिका, पाकिस्तान एवं सऊदी अरब में रहते हैं। उनके चाहने वाले पाठक लाखों की संख्या में पूरे संसार में फैले हुए हैं। उनके उर्दू उपन्यास इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। हिन्दी उपन्यासों का अकाल है।

इब्ने सफ़ी के उपन्यासों में प्रयुक्त उर्दू भाषा का अपना आकर्षण था। उसमें शब्द-चातुर्य था, रवानी थी, गीतात्मक प्रवाह था और एक स्पष्टता थी। 250 किताबों के लगभग 40,000 पृष्ठों पर अपनी छाप छोड़ पाना एक विशेष दर्जा रखता है। इसके बावजूद साहित्य के मठाधीशों ने इब्ने सफ़ी को वह सम्मान कभी नहीं दिया, जिसके वह हकदार थे। पर लगता है कि जमाना बदल रहा है। वह पीढ़ी जो बरसों पहले उनकी किताबें छुपाकर, तकिये के नीचे रखकर पढ़ती थी, वह पीढ़ी आज 40-60 वर्ष की आयु सीमा में है और अभी भी ढूँढती है उन किताबों और पात्रों को। कई पूर्वाग्रह टूटे हैं और हो सकता है इब्ने सफ़ी की रचनाओं का अब सही मूल्यांकन हो। कुछ बरसों पहले दिल्ली में डॉ. गोपीचंद नारंग की अध्यक्षता में इब्ने सफ़ी पर एक अंतर्राष्ट्रीय परिचर्चा हुई, जिसमें एक जर्मन महिला ने इब्ने सफ़ी पर शोधात्मक आलेख पढ़ा।

एक बार किसी ने इब्ने सफ़ी से पूछा कि वह 'पेरी मैसन' के प्रसिद्ध रचनाकार अर्ल स्टेनली गार्डनर की शैली में क्यों नहीं लिखते? इब्ने सफ़ी का जवाब था- 'क्या आपमें साहस है कि आप जाकर स्टेनली गार्डनर से पूछें कि वह इब्ने सफ़ी के अंदाज में क्यूं नहीं लिखते?

अपने प्रिय उपन्यासकार इब्ने सफ़ी को एक ऋणी पाठक की सादर श्रद्धांजलि।

- किशोर सोनी

शख्सियत

नीलेकणी : चम्मच से समुद्र पी जाने का जज़्बा

मात्र 49 वर्ष की आयु में आज नीलेकणी उपलब्धि के जिस शिखर पर आसीन हैं, उसका कारण कठिन मेहनत, समय-प्रबंधन, टीम वर्क अर्थात् सभी को साथ लेकर चलना, कुछ करने की धुन और हमेशा सकारात्मक सोच। किसी भी परिस्थिति में खुद को झुकने न देने का दम, हालातों से हार न मानने की ताकत ने ही इस छोटी उम्र में यह मुकाम हासिल करवाया है।

चम्मच से समुद्र पी जाने की जिद्द। उस अदम्य जिद्द की ज़द। उस अकाट्य ज़िद्द की हद, कहीं कोई नहीं होती है। दूर-दूर तक शून्य या कहिये पसरा एक ख़ला। उस नितांत दीर्घ विस्तरण में निरंतर स्वरूप पाने को कसमसाती इक 'रार'। इस 'रार' को ठाने बैठा एक जोगी। हाथ में इकतारा लिये, तारे छूने की ललक के साथ। पाँव में चपलता, दिल में उमंग और दिमाग में तूफान। कुछ नया, कुछ उजला और कुछ खास करने को। पाँव थके तो हौंसला कहे 'चला चल, चल फ़कीरा।' न रात की खबर और न दिन का अहसास। वक्त ने पकड़ी रफ्तार, प्रयास फर्राटे पर थे तो खिड़कियाँ बोल उठीं, ''वो आ रहे हैं परिणाम।'' जब ज़ज्बा ज़ज्बातों को रंग देता है तो दुनिया बाहों में ग्लोब-सी समा जाती है। कायदा साफ है पंखों पर गुदगुदी का अहसास करने वालों को देखकर शेष पक्षियों की पाँखें भी यदि खुजलाने लगें, फड़फड़ाने की छटपटाहट होने लगे तो समझिये अब अभीष्ट गज भर के फासले पर है।

सूचना तकनीक उद्योग का एक ख्यातिलब्ध नाम ऐसा है, जिसने इस क्षेत्र में वो कार्य किया, जिससे उसकी गिनती बड़े नामों में शुमार हो गयी। नंदन एम.नीलेकणी आईटी जगत का वो हस्ताक्षर, जिसका लोहा मानते हुए सरकार ने उन्हें 'नेशनल यूनिक आइडेंटिफिकेशन अथॉरिटी' (एनयूआईए) का चेयरमैन नियुक्त किया। श्री नीलेकणी ने अब देश के हर नागरिक को पहचान देने की मुहिम पर कमर कस ली है। इसके तहत उन्होंने तय किया कि राष्ट्रीय स्तर पर प्रत्येक नागरिक के लिये ऐसे पहचान-पत्र बनेंगे, जिन पर उसके विषय में तमाम जानकारी हो और वे कार्ड-जीवन की जरूरतों और कार्यों को फलीभूत करवाने में सहायक भी सिद्ध हों। इस कार्ड के जरिये कोई भी व्यक्ति बैंक में खाता खोलने, पेंशन संबंधी कार्य करवाने, संपत्ति के हस्तांतरण, ट्रैवेल टिकट खरीदने के लिये यहाँ तक कि अस्पतालों में पंजीकरण कराने तक के काम करवा सकता है। चेयरमैन नीलेकणी के अनुसार इस मिशन पर उन्होंने तय किया है कि यह कार्ड प्रत्येक नागरिक को ऐसी सुविधा दे कि उन्हें जिंदगी की इस भागदौड़ में अपने हिस्से की कुछ निजात मिले। जाहिर है, जब मिशन बड़ा है, तो इसके लिये तैयार प्रारूप और प्रविधियाँ भी उससे कहीं आगे होंगी। आई.टी. क्षेत्र के इस नक्षत्र के अनुसार इस कार्ड पर सोलह अंकों की एक पहचान संख्या दी जायेगी। वो भी अमुक व्यक्ति के चित्र के साथ। अन्य जानकारियों के अलावा इसमें कार्ड-धारक का नाम, लिंग और जन्म-स्थान के साथ जन्मतिथि भी अंकित रहेगी। यह कार्ड नागरिकता, शादी-शुदा या अविवाहित होने संबंधी जानकारी से इतर पहचान-पत्र के रूप में भी काम आ सकेगा।

मात्र 49 वर्ष की आयु में आज नीलेकणी उपलब्धि के जिस शिखर पर आसीन हैं, उसका कारण कठिन मेहनत, समय-प्रबंधन, टीम वर्क अर्थात् सभी को साथ लेकर चलना, कुछ करने की धुन और हमेशा सकारात्मक सोच। किसी भी परिस्थिति में खुद को झुकने न देने का दम, हालातों से हार न मानने की ताकत ने ही इस छोटी उम्र में यह मुकाम हासिल करवाया है। नीलेकणी का मानना है कि किसी व्यक्ति विशेष या संस्थान की सफलता इस बात पर निर्भर रहती है कि क्या वहाँ प्रतिभा का सम्मान हो रहा है। जिस जगह मेरिट की कद्र होती है, वो संस्थान बुलंदियाँ छू लेता है। इसका कारण है कि मेरिट लेने वाली शख्सियतें मेहनत से रात-दिन एक कर देती हैं। नीलेकणी का मानना है कि प्रतिभा का कोई विकल्प ही नहीं होता। कहीं-कहीं तो प्रतिभा अनुभव को खासे अंतर पर पीछे छोड़ जाती है, लेकिन दोनों का मंजुल मिश्रण तो सोने पे सुहागे जैसी स्थिति ही कही जायेगी। इस आईटी ज़ार का मानना है कि सभी युवाओं को आज की वस्तुस्थिति समझनी चाहिए, जिसमें यदि कुछ प्रभावशाली है, तो वह 'टीम वर्क' है न कि व्यक्तिगत उपलब्धियाँ। उन्होंने कहा कि इन वर्तमान हालातों को आत्मसात कर हमें आगे बढ़ना चाहिए। मेरी नसीहत और मेरा मशविरा यंग-ब्रिगेड के लिये यही है।

एक सॉफ्टवेयर कंपनी में इंजीनियर की हैसियत रखने वाले इस व्यक्ति ने सफलता की जो सीढ़ियाँ चढ़ी हैं, वह भी इतने कम समय में, अपने आप में नामचीन उपलबधि ही कही जायेगी। एक छोटे-से शहर में बड़ा हुआ यह युवक जब 18 वर्ष की आयु में आईआईटी मुंबई के परिसर में दाखिल हुआ था, तब शायद ही किसी ने सोचा हो कि सफलता का ऐसा पहाड़ा पढ़ेगा, ये युवक। बात 1973 की है, जब मुंबई में इसने कदम रखा। आईआईटी मुंबई से पाँच साल पढ़ने के बाद इस युवक ने खुद में बदलाव पाया और महसूस किया कि अब उसमें दुनिया का सामना करने को काफी कुछ है। स्नातक डिग्री करने के बाद नंदन एम.नीलेकणी मुंबई स्थित पटनी कंप्यूटर सिस्टम्स कंपनी के सॉफ्टवेयर हेड नारायण मूर्ति के कैबिन में गये, बातचीत हुई और भा गये श्री मूर्ति को। कंपनी में नियुक्ति क्या मिली मानो पंख लग गये हों। उड़ान में जो आनंद आया, वो दिन-प्रतिदिन बढ़ता गया और परिणाम जगज़ाहिर है। छोटी उम्र में बड़ा मुकाम। भारत के कॉर्पोरेट इतिहास में यह गज़ब घटना ही कही जायेगी। फिर सिर्फ तीन साल बाद सन् 1981 में सात युवकों ने हाथ मिलाया और इन्फोसिस टेक्नोलॉजी नाम से एक कार्य शुरू किया। सात युवकों की टीम ने नंदन एम. नीलेकणी के नेतृत्व में कार्य शुरू किया। मजे की बात यह है कि नारायण मूर्ति द्वारा इन्हें पुणे में एक छोटे-से फ्लैट में काम शुरू करने की अनुमति दी गयी। 'मेगनिफिशेंट सेवन' के नाम से इस टीम ने काम क्या शुरू किया, भारतीय घरेलू सॉफ्टवेयर के इतिहास में एक नया अध्याय शुरू हुआ। कदम बढ़ते गये तो जरूरतें भी फैलने लगीं। तब मुंबई छोड़कर बंगलूर जाने का मन इसलिये बनाया, क्योंकि आईटी के लिये उपयुक्त संरचनात्मक ढाँचा वहीं पर है। केंद्र और विभिन्न राज्य सरकारों के लिये भी उन्होंने कार्य किया, विशेषकर पॉवर क्षेत्र में। आईटी टास्क फोर्स के चेयरमैन भी बनाये गये। इसके लिये श्री नीलेकणी ने खूब यात्राएँ भी कीं। साल में तीन-चार बार विदेश और महीने में लगभग तीन बार देश के विभिन्न हिस्सों में जाकर जरूरतमंदों की मदद की। नीलेकणी श्री नेल्सन मंडेला को अपना आदर्श मानते हैं, जिन्होंने इतने संघर्षों और लंबी जेल के बाद भी हार नहीं मानी और अपना मकसद पूरा किया।

अपनी कंपनी इन्फोसिस को उन्होंने सन् 2003 में मिलियन डॉलर का राजस्व दिलाया। इनकी कंपनी ने चैरिटी कार्यों के लिए 22 मिलियन डॉलर भी दिये। इन चैरिटी में लोगों को शुद्ध पेयजल मुहैया करवाना, रेन वॉटर हार्वेस्टिंग और निर्धन लोगों को इसकी आपूर्ति करवाना प्रमुख हैं। नीलेकणी के अनुसार सफलता के अन्य मंत्रों के साथ एक बड़ा मंत्र 'पारदर्शिता' भी है। उनका मानना है कि यदि किसी मुद्दे पर शंका हो तो उसे सबके सामने व्यक्त करो, मसला जरूर हल होगा। उनका यह भी मानना है कि राजनेता और व्यवसायी ठीक से नहीं सोते, पूरी नींद नहीं ले पाते, कुछ तो सारी रात जागकर काम में लगे रहते हैं।

अपने खाली समय में अब नीलेकणी परिवार के साथ रहकर नयी बातें सीख और सिखा रहे हैं। उनकी पत्नी रोहिणी नीलेकणी अंग्रेजी की उपन्यासकार हैं। इस दंपत्ति के दो बाल-गोपाल भी हैं- एक लड़का और एक लड़की। जब किसी ने श्री नीलेकणी से अब उनकी गहरी नींद का राज़ पूछा तो उन्होंने कहा, ''साफ अंत:करण सबसे मुलायम तकिये का काम करता है।''

- नरेश दत्त शर्मा

110वें जन्मदिवस पर आचार्य आनंदऋषि-एक पथ-प्रदर्शक

आचार्य आनंदऋषि जी सरलता की साकार मूर्ति थे। उनके अनुयायी भी यह मानते हैं कि वे विनम्रता के पुँज, ज्ञान-विज्ञान के अमृत-सागर और धर्म-दर्शन के मर्मस्पर्शी थे। उनमें आदर्श मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे। राम के समान संकल्प शक्ति, हनुमान के समान उत्साह, अंगद के समान दृढ़ता, महावीर के समान धैर्य, बाहुबली के समान वीरता तथा शिव के समान विष पीकर समाज में अमृत बाँटने की क्षमता वाले महापुरुष थे

महाराष्ट्र की पुण्य-भूमि पर अहमदनगर के एक छोटे-से गाँव चिंचोड़ी में विक्रम संवत् 1957 श्रावण शुक्ल 1 अर्थात 26 जुलाई, 1900 ई. को श्री देवीचंद गुगलिया के परिवार में श्रीमती हुलसा बाई ने पुत्र-रत्न को जन्म दिया। इस तेजस्वी बालक का नाम नेमीचंद गुगलिया रखा गया। बालक बड़ा होने पर आम बच्चों से भिन्न मन:स्थिति का दिखाई दिया। बच्चे नेमीचंद को साधु-संतों के प्रवचन सुनने में आनंद आता था। धीर-गंभीर नेमीचंद को सबसे बड़ा आघात बाल्यकाल में अपने पिता के निधन से हुआ। बाल-मन में जीवन-मृत्यु, आस-विश्वास, धर्म-अधर्म जैसे कई प्रश्न उथल-पुथल करने लगे। इनका उत्तर उसे प्रवचनों में मिलने लगा, जिसके चलते वह अधिक से अधिक समय भजन-कीर्तन और प्रवचनों में बिताने लगा। उनकी इस आध्यात्मिक प्रवृत्ति को देखकर परिवार वालों ने उन्हें विवाह के सांसारिक बंधन में बाँधना चाहा, परन्तु उनका मन तो कहीं और ही था। उन्होंने अपना मार्ग खुद चुना और माँ की आज्ञा लेकर तेरह वर्ष की आयु में विक्रम संवत् 1970, मार्गशीर्ष शुक्ल 1 (7 दिसंबर, 1913ई.) को अपने गुरु श्रीरत्न ऋषि जी महाराज से अर्हंती दीक्षा ली। यह दीक्षा अहमदनगर के मिरी गाँव में सम्पन्न हुई, जिसके परिणाम स्वरूप नेमीचंद गुगलिया से आचार्य सम्राट आनंदऋषि जी महाराज का आध्यात्मिक सफर प्रारंभ हुआ।

आचार्य आनंदऋषि जी ऋषि सम्प्रदाय के सर्वप्रथम 'आचार्य' पद से सुशोभित हुए, जिसके बाद श्रमण संघ का निर्माण हुआ। इसमें आचार्य श्री ने उपाध्याय, प्रधानमंत्री और अंतत: आचार्य सम्राट जैसे पदों को अलंकृत किया। विक्रम संवत् 2019, माघ कृष्ण नवमी (30 जनवरी, 1963ई.) को आचार्य सम्राट श्री आत्मराम जी महाराज का स्वर्गवास हुआ तो चतुर्दिक संघ की ओर से महामहिम श्री आचार्य आनंदऋषि जी महाराज को अजमेर सम्मेलन में आचार्य पद की प्रतीक चादर विक्रम संवत् 2021, फाल्गुन शुक्ल 11 (13 मार्च, 1965 ई.) को समर्पित की गई।

आचार्य आनंदऋषि जी को साहित्य से विशेष लगाव था। वे कई भाषाओं के ज्ञाता थे, जिनमें संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी, राजस्थानी आदि पर पूर्ण अधिकार था। उन्होंने कई ग्रंथ लिखे तथा कई मराठी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद किया। उनके प्रवचन सुनने वालों को मंत्रमुग्ध कर देते थे। उनके मुख्य प्रवचनों को संकलित करके 'आनंद प्रवचन' नाम से बारह खण्डों में प्रकाशित किया गया, जिनमें उनकी श्रेष्ठतम कृतियाँ 'स्यादूवाद सिद्धांत: एक अनुशीलन' तथा 'भावनायोग - एक विश्लेषण' भी सम्मिलित हैं। उन्होंने अपने लेखन के लिए राष्ट्रभाषा का ही चयन किया, क्योंकि वे यह मानते थे कि सारे राष्ट्र को संदेश पहुँचाना है, तो हिन्दी ही सबसे सक्षम माध्यम होगी। उन्हें विश्वास था कि राष्ट्रभाषा ही राष्ट्र को एक सूत्र में बाँध सकती है।

आचार्य आनंदऋषि जी सरलता की साकार मूर्ति थे। उनके अनुयायी भी यह मानते हैं कि वे विनम्रता के पुँज, ज्ञान-विज्ञान के अमृत-सागर और धर्म-दर्शन के मर्मस्पर्शी थे। उनमें आदर्श मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे। राम के समान संकल्प शक्ति, हनुमान के समान उत्साह, अंगद के समान दृढ़ता, महावीर के समान धैर्य, बाहुबली के समान वीरता तथा शिव के समान विष पीकर समाज में अमृत बाँटने की क्षमता वाले महापुरुष थे - आचार्य आनंदऋषि जी।

आचार्यश्री ने समाज में व्याप्त कुरीतियों के निवारण के लिए एक पंच-सूत्री कार्यक्रम बनाया, जिसके आधार स्तंभ हैं- बाल-संस्कार, आडंबर-उन्मूल, समाज-संगठन, व्यसन-मुक्ति तथा धर्म-जागृति।

समाज में फैले मिथ्या आडंबर, फिजूल खर्ची, धन-प्रदर्शन आदि से फैलने वाली होड़, ईर्ष्या और द्वेष को रोकने का आचार्य श्री ने आह्वान किया, जिससे समाज में खुशहाली और भाईचारा बढ़े। उनका मानना था कि 'भौतिकता की वर्तमान आँधी में धर्म का खंभा ही समाज को बचा सकता है और उसका बचना ही मानव-जाति के बचने जैसा है। यही आज जैन-धर्म की या अन्य किसी धर्म की प्रासंगिकता है।''

आचार्य आनंदऋषि जी जैसे युग-पुरुष को, जिन्होंने सांसारिक बंधनों से मुक्त होते हुए भी समाज की भलाई, उन्नति और उत्थान की सोची, शत-शत नमन है। विक्रम संवत् 2049, चैत्र कृष्ण 10 (28 मार्च, 1992 ई.) को इस दिव्य-पुंज ने अपनी आत्मा को परमात्मा में विलीन करने के लिए अपने जीर्ण शरीर को त्याग दिया।

आचार्य सम्राट आनंदऋषि जी महाराज एक महान पथ-प्रदर्शक थे। आचार्यश्री ने हैदराबाद के समाज साहित्य और साहित्यकारों को प्रोत्साहित करने के लिए 'आचार्य आनंदऋषि साहित्य निधि' की नींव रखी, जिसने दक्षिण भारत के हिन्दी-सेवी हिन्दीत्तर भाषियों को पुरस्कृत करने का बीड़ा उठाया।

आचार्य के जीवनकाल में ही इस साहित्य-पुरस्कार की स्थापना की गई और प्रथम पुरस्कार सन् 1991 ई. में प्रदान किया गया। श्री उगमचंद सुराणा की अध्यक्षता तथा कार्यदर्शी श्री तेजराज जैन के अथक परिश्रम का नतीजा है कि इस निधि ने अब तक अठारह हिन्दी सेवियों को पुरस्कृत किया। आशा है कि आचार्य आनंदऋषि जी महाराज का आशीष सदा बना रहेगा और उनके बताए हुए मार्ग पर चलते हुए 'आचर्य आनंदऋषि साहित्य निधि' निरंतर सफलता की ओर अग्रसर होती रहेगी।

- चंद्रमौलेश्वर प्रसाद